प्रकाशक
श्री केदारनाथ गुप्त, एम० ए०
प्रोप्राइटरः—छात्रहितकारी पुस्तकमाला,
दारागंज, प्रयाग ।

मुद्रक
श्री रघुनाथप्रसाद वर्मा
नागरी प्रेस, दारागंज,
प्रयाग

# श्री शंकराचार्य

इस संसार में कौन ऐसा पुरुष होगा जो श्री शंकराचार्य को न जानता हो या उनका नाम न सुना हो। भारतवर्ष के लोग तो आपको जानते ही हैं मगर अन्य देशों में भी जैसे जापान, ब्रह्मा, चीन, लङ्का, जर्मनी फ्रांस आदि स्थानों में भी आपका नाम अमर है। लोग आपको बड़ी श्रद्धा की दृष्टि से देखते हैं। संस्कृत में एक महान पुस्तक 'शंकर दिग्विजय' नामक है उसमें आपके जीवन का हाल तथा आपने किस प्रकार अपने पांडित्य से संसार को विजय किया है, अच्छी तरह विस्तारपूर्वक लिखा है। अन्य देशवासियों ने भी अपनी अपनी भाषा में आपका जीवन चरित्र लिखा है।

## जन्म

आपके पिता का नाम शिवगुरु तथा माता का नाम सती था और आपके पितामह अर्थात् बाबा का नाम

विद्याधिराज था। पुराने समय में दक्षिण में कोल नामक एक छोटा सा राज्य था, वहां पर राजेश्वर नामक एक राजा राज्य करता था। उसके राज्य में एक छोटी सी नदी थी जिसका नाम पूर्णा था। इसी नदी के किनारे राजा ने एक शिवमन्दिर बनवाया था तथा वहीं पर एक छोटा सा शहर बसाया था। इसमें एक महात्मा ब्राह्मण रहते थे जिनका नाम विद्याधिराज था। ये बड़े गुणी तथा विद्वान थे। ये शिव जी के भी बड़े भक्त थे। ईश्वर की कृपा से इनके एक पुत्र पैदा हुआ जिसका नाम शिवगुरु रक्खा गया।

यह बालक धीरे धीरे चन्द्रमा की भांति बढ़ता गया। जब पाँच वर्ष का हुआ तब विद्याधिराज ने इनका यज्ञोपवीत संस्कार करा दिया और गुरुकुल में विद्याध्ययन के लिये भेज दिया। उस समय आज कल की तरह पढ़ाइ की प्रथा नहीं थी। प्रत्येक विद्यालय जंगलों में होते थे, जहाँ की हवा तथा पानी शुद्ध रहता था। वहाँ पर विद्यार्थियों को अपने गुरू के आधीन रह कर नियम-पूर्वक ब्रह्मचर्य का पालन करके विद्याध्ययन करना पड़ता था। विद्यार्थी अपने गुरू को ईश्वर तुल्य मानते और उनकी आज्ञा का उल्लंघन कभी नहीं करते थे। इसका फल यह होता था कि विद्यार्थी बड़े विद्वान तथा योग्य

निकलते थे। ऐसे ही एक पाठशाला में शिवगुरु पढ़ने के लिये भेजे गये। ये बारह वर्ष तक वहीं पर विद्याध्ययन करते रहे। जब इनके गुरू ने देखा कि शिवगुरु सर्व-गुण सम्पन्न हो गये तब उन्होंने शिवगुरु से कहा कि अपने घर में जाकर माता पिता की सेवा करो तथा विवाह करके सांसारिक नियमों का पालन करो। मगर शिवगुरु ने वहीं पर रहकर गुरू की सेवा करने तथा अखंड ब्रह्मचर्य पालन कर के वेदों का अध्ययन करने का विचार किया। उसी समय अकस्मात् इनके पिता भी आगये।

## शिवगुरु का विवाह

विद्याधिराज ने अपने पुत्र को अच्छी तरह समझाया और उनको मकान भी ले गये। इनके पुत्र की योग्यता का परिचय लोगों में धीरे धीरे बढ़ता गया। तमाम जाति वाले अपनी अपनी लड़की की शादी शिवगुरु के साथ करने के लिये इनके पिता के पास आये। वहीं पर मद्य नाम के एक बड़े भारी विद्वान ब्रह्मण रहते थे। उनके घर में एक रूपवती, गुणवती तथा सुशीला कन्या थी जिसका नाम सती था। इसी के साथ शिवगुरु का विवाह हो गया। अब शिवगुरु गृहस्थाश्रम में रहने लगे।

नियम पूर्वक रहते रहते इनकी बहुत उम्र बीत गई, मगर इनके कोई भी पुत्र न हुआ। तब अपनी पत्नी के परामर्श से ये पत्नी सहित श्री शंकर जी की उपासना करने चले गये। वृक्षगिरि पर्वत पर दोनो प्राणी श्री महादेव जी की उपासना करने लगे। जब कुछ समय बीत गया तब शिवजी इनके ऊपर प्रसन्न हो गये और आशीर्वाद दिया कि तुम्हारे घरमें एक सर्वगुण सम्पन्न बालक उत्पन्न होगा जो सारे संसार को विजय करेगा और अपना तथा तुम्हारा नाम अमर करेगा। कुछ समय पश्चात् शिवगुरु की पत्नी के एक पुत्र पैदा हुआ जो बड़ा तेजस्वी था। मात-पिता कई वर्षों से एक पुत्र के लिये लालायित थे। अब एक सुन्दर पुत्र पाकर उनकी प्रसन्नता का ठिकाना न रहा। उन्होंने बड़े समारोह के साथ पुत्रका जन्म दिवस मनाया और ब्राह्मणों को दान दिया। शङ्कर जी के द्वारा पुत्र दिये जाने के कारण इनका नाम भी शङ्कर रक्खा गया। ये वही शङ्कर हैं जिनको हम अब श्री शङ्कराचार्य कहते हैं। इनके पिता ने ज्योतिषियों को बुलाकर बालक का भाग्य पूछा। उन लोगों ने एक स्वर से कहा कि यह बालक बड़ा विद्वान तथा महात्मा निकलेगा। तब ज्योतिषियों को दान आदि देकर विदा किया।

## विद्याध्ययन

जब शङ्कर जी तीन वर्ष के हुये तब इनके पिता ने इनका मुन्डन संस्कार किया, मगर इसके कुछ ही दिन पश्चात् पिता का देहान्त हो गया। अब शङ्कर की माता के ऊपर बच्चे के पालन-पोषण का भार पड़ा। जब ये पाँच वर्ष के हुए तब इनकी माता ने इनका यज्ञोपवीत संस्कार किया और विद्याध्ययन कराने के लिये एक गुरु के पास भेजा। इन्होंने अपने शिष्य को इतनी अच्छी शिक्षा दी तथा शङ्कर जी ने इतना मन लगा कर विद्याध्ययन किया कि थोड़े ही समय में सब शास्त्रों का अध्ययन कर लिया तथा महाभाष्य पर्यंत व्याकरण को पढ़ कर एक बड़े भारी पंडित हो गये। इनकी योग्यता इतनी अच्छी हो गई कि शास्त्रार्थ में बड़े बड़े पंडित इनके सामने नहीं टिक सकते थे।

## संन्यास आश्रम

जब विद्याध्ययन समाप्त कर चुके तब आप अपनी माता के पास गये और इनकी माता ऐसे योग्य पुत्र को पाकर बड़ी प्रसन्न हुईं और उनसे विवाह करने के लिये कहा, मगर आपने अपनी माता को बहुत समझाया कि विवाह करके मनुष्य माया में फँस जाता है और

फिर उसका मोक्ष नहीं होता। मगर उनकी माता को कुछ भी समझ में न आया। तब आप चुप हो गये और सोचने लगे कि ऐसा उपाय करना चाहिये कि माता भी खुश रहें और मैं सन्यास लेकर मोक्ष की कोशिश भी करूँ।

एक दिन आप नदी में स्नान करने गये थे कि एक घड़ियाल ने आपके एक पैर को पकड़ लिया। ये लगे रोने और चिल्लाने। किसी ने जाकर आपकी माता को भी यह खबर दे दी। आपकी माता भी रोती चिल्लाती आईं और भगवान शङ्कर से प्रार्थना करने लगीं कि यह पुत्र बड़ा भारी महात्मा होगा। मगर इसको घड़ियाल की वजह से बड़ा कष्ट है। अब तुम ही इसको मगर से छुड़ा सकते हो। शंकर जी ने अपनी माता की बोली सुनकर माता से कहा—हे माता! अगर तू मुझे संन्यास लेने के लिये हुक्म दे दे तो ग्राह मेरे पैर को छोड़ देगा। माता ने इस बात को स्वीकार कर लिया और कहा कि अच्छा तुम सन्यासी हो जा। अगर तू चिरञ्जीव रहेगा तो कभी न कभी मैं तुझको अवश्य देख लिया करूँगी। मगर मेरे मरते समय तुम्हें मेरे पास आना पड़ेगा और मेरी अन्त क्रिया करनी होगी। इसको मान कर वे सन्यासी बनकर तथा घर-बार छोड़ कर वहाँ से चल दिये।

## गुरु दीक्षा लेना

रास्ते में आपने वस्त्र आदि बदल लिये और नर्मदा नदी के किनारे पहुंचे। इस नदी के किनारे श्री गोविंदाचार्य जी का आश्रम था। वे खोजते खोजते वहीं पर पहुंचे। वहां पर एक गुफा थी, उसी में श्री गोविन्दाचार्य जी ध्यान लगाये बैठे थे। उस गुफा में हवा आने के लिये बड़ा छेद था उसी छेद से आप झाँकने लगे। उन्होंने आप से पूछा कि आप कौन हैं तथा यहाँ पर क्यों आये हैं? इस पर आपने उत्तर दिया कि हम शंकर हैं और आप से संन्यास लेने के लिये आये हैं। श्री गोविन्दाचार्य जी ने आपको अपना शिष्य बना लिया और आप वहीं पर रह कर अपने गुरू जी के चरणों की पूजा करने लगे। चार महीने तक शंकर जी यहीं पर रहे। जब चार माह समाप्त हो गया तब आपके गुरू ने आपको काशी जाने का हुक्म दिया और कहा कि वहाँ जाकर लोगों को वेदान्त मत की शिक्षा दो तथा व्यास सूत्रों पर भाष्य की रचना करो और जितने वेद विरुद्ध मत हैं उनको नाश करके अद्वैत मत का प्रचार करो। अपने गुरू की आज्ञा पर आप काशी को चल दिये और कुछ दिन पश्चात् काशी पहुंच गये तथा वहीं पर निवास करने लगे।

## सनन्दन को शिष्य बनाना

एक दिन शंकर जी गङ्गा जी स्नान करके आसन पर बैठे ही थे कि उसी समय एक ब्राह्मण का लड़का जो बड़ा तेजस्वी तथा विद्वान प्रतीत होता था आकर आपके पास प्रणाम करके बैठ गया और प्रार्थना करने लगा कि आप मुझ अनाथ को अपनी शरण में ले लीजिये और अपना शिष्य बना लीजिये। मैं कावेरी नदी के किनारे पर रहने वाला हूं और बहुत समय से महापुरुष के दर्शन के लिये इधर उधर मारा मारा फिर रहा हूँ। मगर आज बड़े भाग्य से आपके दर्शन हुये हैं। इसलिये आप मुझे अपनी शरण में लेकर इस संसार से छुट्टी कर मोक्ष दिला दीजिये। उसके प्रार्थना करने पर शङ्कर जी ने उसे उपदेश देकर अपना शिष्य बना लिया और उसका नाम सनन्दन रक्खा। अब सनन्दन अपने गुरू शङ्कर जी के पास रहने लगा।

## भट्टपाद

दक्षिण में एक बड़े विद्वान पंडित रहते थे जिनका नाम भट्टपाद था। ये बड़े विद्वान थे। जिस समय ये थे उस समय भारतवर्ष में जैन मत तथा बौद्धमत का प्रचार

था। उसी समय सुधन्वा नामक एक राजा राज्य करता था जो जैनियों का शिष्य था तथा जैनमतावलम्बी था। भट्ट जी जैन मत को विध्वंस करने के लिये इस राजा के पास गये। राजा ने इनकी बड़ी आवभगत की और जैन पंडितों के साथ इनके शास्त्रार्थ करने को भी स्वीकार किया। सभा की बहुत बड़ी तैय्यारी की गई और अनेक जैन मत के तथा बौद्ध मत के पंडित बुलाये गये। कई दिनों तक आपस में शास्त्रार्थ होता रहा। अन्त में भट्ट जी ने जैनमत और बौद्धमत के पंडितों को हरा दिया। राजा भट्टजी का शिष्य हो गया।

## भट्टपाद और शंकराचार्य जी की भेंट

अब उस देश में भट्टपाद का मत खूब ज़ोरों से चलने लगा। मगर जब वे बूढ़े हो गये तब उन्होंने सोचा कि हमने जो ईश्वर का खंडन किया है वह अच्छा नहीं हुआ है। उससे हमको बड़ा भारी दोष लगा है। यह दोष तभी दूर हो सकता है जब कि हम प्रयाग में जाकर चिता में भस्म हो जायँ। अतएव वे प्रयाग गये और वहां पर गङ्गा नदी के किनारे जलने के लिये एक चिता तैयार करवाई। उधर शंकर जी संसार को जीतने के लिये बद्रिकाश्रम से चल दिये थे। एकाएक घूमते घामते

आप भट्ट जी के पास से निकले। भट्ट जी ने आपको देखकर आपका बड़ा आदर सत्कार किया। जब शंकर जी अपने शिष्यों सहित प्रसाद पा चुके तब भट्ट जी ने कहा कि निरीश्वर वाद रूपी दोष को हटाने के लिये मैं ज़िन्दा भस्म हो रहा हूँ। मगर तुम अपने समुद्र रूप विद्या से दिग्विजय करो और तुम्हारा यश बहुत समय तक संसार में बना रहे। सर्व प्रथम तुम मंडन मिश्र के पास जाओ और उसको उसके स्त्री सहित विजय करो। मंडन मिश्र तो विद्वान है ही मगर उसकी स्त्री भी बड़ी पंडिता है। इतना कहकर भट्ट जी ने अपने चिता में आग लगवा दी और भस्म हो गये।

## मंडन मिश्र की पराजय

मंडनमिश्र रेवती नदी के किनारे महिष्मती नगरी के रहने वाले थे। वे अपने समय के मगध के बहुत बड़े विद्वान थे। कुछ लोगों का कहना है कि ये कुमारिल भट्ट के शिष्य थे और कुमारिल भट्ट ने ही शङ्कर को मंडनमिश्र के साथ शास्त्रार्थ करने को भेजा था। ऐसे महा विद्वान को जानकर शङ्करजी इस नगरी की ओर चल दिये और नदी के किनारे पर आकर अपने शिष्यों के सहित आसन जमा दिया। वहां पर कई स्त्रियां स्नान करने

तथा जल भरने आई थीं। उन स्त्रियों में से एक मंडन मिश्र की दासी भी थी। इस दासी से शङ्कर जी ने मंडन मिश्र का पता पूछा। दासी ने संस्कृत में उत्तर दिया—

"स्वतः प्रमाणं परतः प्रमाणं
कीराङ्गना यत्र गिरो गिरन्ति।
द्वारस्थ नीडान्तर सन्निरुद्धा
जानीहि तन्मण्डन मिश्रधाम॥
फलप्रदं कर्म फलप्रदोजः
कीराङ्गना यत्र गिरो गिरन्ति।
द्वारस्थ नीडान्तर सन्निरुद्धा
जानिहि तन्मन्डन मिश्रधाम॥
जगद् ध्रुवं स्याज्जगद् ध्रुवं स्यात्
कीराङ्गना यत्र गिरो गिरन्ति।
द्वारस्थ नीडान्तर सन्निरुद्धा
जानीहि तन्मन्डन मिश्रधाम॥

अर्थात् 'वेद स्वतः प्रमाण है या परतः प्रमाण है, कर्म आप ही फल देता है या ईश्वर कर्म का फल देता है, जगत नित्य है या अनित्य है, इस प्रकार जिनके द्वार के आगे मैना पिंजरे में बैठी बोलती है वही हमारे मंडन मिश्र का घर है।" शंकर जी का मामूली पंडित का

सामना नहीं करना था। यह सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है कि मंडन मिश्र कितने विद्वान थे। जिनके दरवाजे पर मैना शास्त्रार्थ कर सकता था, जिनकी दासी इतनी विदुषी थी तथा जिनकी स्त्री बड़ी पंडिता थी ऐसे विद्वान का क्या कहना। शंकरजी ऐसे ही महापंडित को जीतने के लिये उनके घर की तरफ चल दिये और दासी के कथनानुसार दरवाजे पर आ गये।

वहाँ पर दरवाजे को बन्द पाया। मालूम हुआ कि मंडनमिश्र भीतर श्राद्ध कर रहे हैं। शंकर जी अपने योग बल से भीतर पहुंच गये। आपको देखकर मिश्रजी को बड़ा क्रोध आया और आपको बुरा भला कहा। मगर आपने हरएक का ठीक उत्तर देते हुये कहा कि मैं तुमसे शास्त्रार्थ करने को आया हूँ और तुमको मैं जीतूँगा। मंडन मिश्र ने इसको स्वीकार कर लिया।

सर्व प्रथम मिश्र जी ने अपने श्राद्ध कर्म को सम्पूर्ण किया फिर दोनों ने भोजन किया। तत्पश्चात् दोनों में शास्त्रार्थ आरम्भ हुआ। शंकर जी ने कहा कि हम लोगों में कोई मध्यस्थ होना चाहिये। इस पर मंडनमिश्र की विदुषी अर्द्धाङ्गिनी ने मध्यास्था बनने के लिये कहा, जिसको शंकर जी ने स्वीकार कर लिया। मंडनमिश्र की स्त्री का नाम भारती था। दोनों ने पारस्परिक प्रतिज्ञायें

कीं और अपनी अपनी प्रतिज्ञा को साबित करने का प्रयत्न किया। यह शास्त्रार्थ कई दिनों तक चला। अन्त में मंडनमिश्र जी हार गये। इनकी पत्नी ने भी अपने पति को हारा हुआ कहा और उनसे कहा कि फलस्वरूप तुम शंकर जी के शिष्य हो जाओ और सन्यास ग्रहण कर लो।

## सरस्वती और शंकराचार्य ज़ी का शास्त्रार्थ

जब दोनों भोजन कर चुके तब मंडन मिश्र ने शंकरजी के चरणों में अपना सर रख दिया और शिष्य बनाने के लिये अनुरोध किया। इस पर इनकी पत्नी ने कहा कि मेरे पति अभी पूरी तौर से नहीं हारे हैं। जब तक मैं बैठी हूँ तब तक वे नहीं हार सकते और शंकर जी को अपने साथ शास्त्रार्थ करने के लिये ललकारा, सर्वप्रथम तो शंकर जी स्त्री से शास्त्रार्थ करने पर तैयार न हुये। लेकिन जब सरस्वती ने समझाया कि जब तक आप मुझे परास्त न कर देंगे तब तक हमारे पति सन्यासी नहीं हो सकते। तब लाचार होकर शंकर जी को उसके साथ शास्त्रार्थ करना पड़ा।

अब शंकर जी का भारती के साथ शास्त्रार्थ आरम्भ हुआ। भारती ने आपसे कामशास्त्र के प्रश्न पूछने

शुरू किये । शंकर जो बाल ब्रह्मचारी थे। अतएव वे इस शास्त्र को बिलकुल नहीं जानते थे। अतएव उन्होंने भारती से एक महीने की मुहलत माँगी और कहा कि एक माह बाद मैं इन सब प्रश्नों का उत्तर दूँगा। इस बात को भारती ने मान लिया।

शंकरजी एक मास बाद मंडन मिश्र के घर पहुंचे और भारती से फिर शास्त्रार्थ करना आरम्भ किया। दो चार दिनों तक शास्त्रार्थ होता रहा। मगर अन्त में भारती को हारना पड़ा और मंडनमिश्र अब पूरी तौर से हार गये और उन्होंने आपसे सन्यास लिया। आपने उनको दीक्षा दी और अपना शिष्य बना लिया।

शंकर जी ने मंडन मिश्र का नाम सुरेश्वराचार्य रक्खा और उनको अपने साथ लेकर दक्षिण की तरफ चल दिये। वहाँ पर आपने जीव ब्रह्म के अभेद ज्ञान का उपदेश किया। फिर वहाँ से आप श्री शैल पर्वत पर गये और वहाँ पर अद्वैत मत का खूब प्रचार किया। न मालूम कितने सन्यासी आपके शिष्य होगये।

एक दिन की बात है कि एक दुष्ट कपाली ने आपको मारने के लिये साधु का वेष बना कर आया और आप से प्रार्थना करने लगा कि मुझको अपने बनाये हुये ग्रंथ पढ़ाइये। शंकर जी ने इसको स्वीकार कर लिया और

उसको पढ़ाने लगे। जब कुछ दिन बीत गये तब इसने आप से कहा कि मैंने भवानी सहित शंकर जी का दर्शन करने का तप किया है मगर अभी तक सफलता मुझको नहीं मिली है। एक महात्मा ने मुझको बताया है कि अगर कहीं से तुमको किसी मतिराज का सिर मिल जावे और अगर तुम उसका हवन करो तो तुम्हें दर्शन अवश्य होगा। अतएव मैं आपके शिर को लेने के लिये आया हूँ। आप अपना शिर मुझको दे दीजिये। शंकर जी ने इस बात को स्वीकार कर लिया और कहा कि तुम ऐसे दिन मेरा सिर काटने आना जब कोई भी शिष्य मेरे पास न रहे।

एक दिन शंकर जी ध्यान लगाकर बैठे थे। उस समय वह आपका सर काटने को चला। उसने सोचा कि आज शंकर जी एकान्त में हैं। सर अवश्य मिल जायगा। उसके पास बहुत तेज़ एक खड्ग था। पद्माचार्य जी ने इसको देख लिया। उनको बड़ा क्रोध आया और नृसिंह भगवान को याद किया। उनके याद करते ही नृसिंह भगवान प्रगट हो गये और उस कपाली के पेट को चीर कर मार डाला। इस प्रकार कपाली को अपनी करनी का फल मिल गया। नृसिंह जी ने कपाली को मारते समय इतने ज़ोरों का शब्द किया था

कि शंकर जी का ध्यान टूट गया और सब शिष्यगण चौंक पड़े। उन लोगों ने इनसे पूछा कि तुमने नृसिंह भगवान को किस प्रकार अपने वश में किया। पद्माचार्य जी ने कहा कि मैं भगवान नृसिंह का दर्शन करने के लिये वन में तपस्या करने गया था। जब बहुत समय बीत गया तब एक किरात मेरे पास आया और हमसे पूछा कि मैं किस कामना से वहाँ पर तपस्या कर रहा था। जब मैंने जवाब दिया कि मेरी इच्छा भगवान नृसिंह के दर्शन करने की थी तब वह वहाँ से चला गया और थोड़ी देर बाद नृसिंह भगवान को एक रस्सी से बांध कर मेरे सामने खड़ा कर दिया। भगवान को देख कर मैं उनकी प्रार्थना करने लगा और कहने लगा-मुनि लोग बार बार आपके दर्शन के लिये प्रयत्न करते हैं मगर आप दर्शन नहीं देते हैं इस किरात ने कौन से ऐसे कर्म किये हैं जिसके कारण आप इसके हाथ में बँधे बँधे फिरते हैं। भगवान नृसिंह ने उत्तर दिया कि इस किरात ने एकाग्र चित्त से मेरी आराधना की थी इसीलिये मैं इसके वशीभूत हूँ। तथा पद्माचार्य जी को वरदान दिया कि जिस समय तुम मेरी याद करोगे मैं तुम्हारे सामने तुरन्त प्रगट हो जाऊँगा और तुम्हारे कष्टों को दूर कर

दूँगा। इसको सुनकर शंकर जी तथा आप के शिष्यगण बड़े प्रसन्न हुये।

## तोटक को शिष्य बनाना

शंकर जी वहाँ से चल कर समुद्र के किनारे पहुंचे जहाँ पर गोकर्ण महादेव जी का मन्दिर था। वहाँ पर आपने कुछ दिन निवास किया। उसके समीप एक ब्राह्मण रहता था जिसका नाम भास्कर था। उसके एक लड़का था मगर वह पागल के समान रहता था। न पढ़ता था, न खेलता था, न किसी के साथ उठता बैठता था और न कोई काम ही करता था। उसके पिता ने समझा था कि इसको पिशाच आदि लगे हैं। उसी समय उसने शंकर जी का आगमन सुना वह अपने पुत्र को लेकर शंकर जी के पास आया और उनसे पुत्र को अच्छा करने की प्रार्थना की। शंकर जी ने उस बालक को अपने पास बुलाया और उसको अपने करों से छू कर पूछा कि तुम कौन हो। उसने जवाब दिया कि न मैं मनुष्य हूँ, न देवता हूँ, न मैं यक्ष हूँ और न मैं गन्धर्व हूं। न ब्राह्मण हूँ, न क्षत्री हूँ, न वैश्य हूँ और न शूद्र हूँ। न ब्रह्मचारी हूँ, न गृहस्थ हूँ, न वानप्रस्थ हूँ और न सन्यासी हूँ। इन बातों को सुन कर आप समझ गये कि यह लड़का कौन है और उसके पिता से कहा कि यह

लड़का तुम्हारे लायक नहीं है। इस बालक को मेरे पास रहने दो। इसके पिता लड़के को छोड़ कर घर चले गये।

वहाँ से चलकर शंकर जी शृंगी पर्वत पर गये और कुछ दिन तक वहाँ पर रहे। उस ब्राह्मण के लड़के को सन्यासी बनाकर अपना शिष्य बनाया और उसका नाम तोटक रक्खा। तोटक अपने गुरू जी के ऊपर अच्छी भक्ति रखता था और आपकी सेवा अच्छी प्रकार किया करता था। एक दिन वह नदी में जल लेने को गया था कि गुरू की कृपा से उसके हृदय में विद्या स्फुरण हो गई और उसने रास्ते ही में वेदान्त का तोटक ग्रंथ रच डाला। बात ऐसी हुई कि उसी दिन सब शिष्य लोग शंकर जी के सामने आये और पढ़ाने के लिये कहा। आपने कहा कि जब तक तोटक न आ जायगा, आज पढ़ाई न होगी। इस पर शिष्यों ने कहा कि वह तो मूर्ख और अपढ़ है। उसकी समझ में कुछ भी नहीं आ सकता। इस पर आपने ऐसी कृपा की कि तोटक के हृदय में सारी विद्या उत्पन्न हो गई और उसने रास्ते ही में वेदान्त का तोटक ग्रंथ रच डाला और गुरू जी को दिखाया। गुरू जी इसको देख कर बड़े प्रसन्न हुये और शिष्यों का सारा घमन्ड जाता रहा। तोटक का नाम उस दिन से तोटकाचार्य रक्खा गया।

एक दिन सुरेश्वराचार्य जी शंकर जी से शारीरिक भाष्य पर वृत्ति बनाने की आज्ञा लेकर एकान्त में बैठ कर काम में लग गये। उस समय चित्सुखाचार्य के मन में बहुत बड़ा घमन्ड उत्पन्न हुआ और पद्माचार्य से सलाह किया कि सुरेश्वराचार्य इस काम को न कर पावें। वे सब मिलकर शंकर जी के पास गये और आपसे प्रार्थना करने लगे कि सुरेश्वराचार्य को वृत्ति बनाने का काम न दिया जाय क्योंकि वह बहुत बड़ा कर्मकान्डी तथा अनीश्वरवादी है। उसने अभी तक सन्यास को भी वैराग्य पूर्वक नहीं ग्रहण किया है। अतएव वह इस कार्य का अधिकारी नहीं है। उसको छोड़ कर हम लोगों में से जिसे चाहिये दे दीजिये। सनन्दन जी ने कहा कि हस्तामलक को वृत्ति बनाने की आज्ञा दे दीजिये। हस्तामलक वही लड़का था जिसको इसका पिता शंकर जी के पास छोड़कर चला गया। आपने इसकी कहानी इस प्रकार सुनाई—

यह जन्म जन्मान्तर के सिद्ध हैं। एक दिन एक नदी के किनारे अपनी कुटिया बनाकर पूर्वजन्म में तप कर रहे थे कि एक स्त्री अपने छोटे बच्चे को लेकर वहाँ पर स्नान करने को आई और बच्चे को इन्हीं के सामने बैठाकर और इन्हीं को तकाकर स्नान करने लगी। वह

बच्चा खेलता खेलता नदी में कूद पड़ा और मर गया। जब उस स्त्री ने अपने बच्चे को इस हालत में पाया तो वह चिल्ला चिल्ला कर रोने लगी। इनको भी बड़ा कष्ट हुआ और इनके दिल में दया भी उत्पन्न हुई। उस समय इन्होंने अपना शरीर त्याग दिया और उस बच्चे के शरीर में प्रवेश कर गये। इनके जाते ही बच्चा जिन्दा होगया और उसकी माँ बहुत खुश हो गई। वह अपने बच्चे को लेकर आई। तभी से ये पागल की तरह ध्यानावस्थित हालत में रहते हैं। गोकि यह सब कुछ जानते हैं मगर अपने ही स्वरूप में मग्न रहने के कारण इनका मन वृत्ति बनाने में नहीं लग सकता।

आपने मन्डन मिश्र के भाष्य पर वार्तिक बनाने की आज्ञा दी और स्वतन्त्र प्रबन्ध रचने को कहा। इधर सुरेश्वराचार्य ने नैस्कर्मसिद्धि नामक ग्रंथ बनाकर गुरूजी के सम्मुख रक्खा। शंकर जी अति प्रसन्न हो गये और अन्य शिष्यों के हृदय में भी यह बात जम गई कि सुरेश्वराचार्य भी एक बहुत बड़े अद्वैतवादी और ज्ञानी हैं। शंकर जी ने उनको आशीर्वाद दिया कि तुम्हारा ग्रंथ संसार में बहुत प्रचलित होगा और तुम्हारी कीर्ति और यश कायम रहेगा। शंकर जी ने और शिष्यों से भी ग्रंथ रचने को कहा। उन्होंने भी आज्ञानुसार

रचनायें कीं और गुरू जी के सम्मुख रक्खीं। उनको देख कर शंकर जी प्रसन्न हुये।

## पद्माचार्य जी का तीर्थ पर्यटन

एक दिन पद्माचार्य जी ने गुरू जी से तीर्थ घूमने के लिये आज्ञा माँगी। गुरू जी ने कहा कि सब तीर्थ गुरू ही में मौजूद रहते हैं। अगर तुम अपने गुरू के पास रहकर गुरू की सेवा करो तो तुमको सब तीर्थों का फल मिलेगा। तुम्हें तीर्थ करने की आवश्यकता ही क्या है। साथ ही साथ तीर्थ करने में अनेकों कष्ट भोगने पड़ते हैं। समय पर भोजन आदि नहीं मिलता। पैदल चलना पड़ता है। अतएव अगर तुम मेरे ही पास रह कर मेरी सेवा करो तो तुम्हें सब फल प्राप्त हो जायेंगे। मगर पद्माचार्य के हठ को देख कर आपने जाने की आज्ञा दे दी। शङ्कर जी की आज्ञा पाकर पद्माचार्य जी तीर्थ यात्रा को चल पड़े।

## शङ्कराचार्य जी का माता का क्रिया कर्म करना

कुछ दिन शङ्कर जी वहीं पर रहे। एक दिन आपने ध्यान लगाकर मालूम किया कि माता जी का मरण समय अब आ गया है और अपनी प्रतिज्ञा को पूर्ण करने के लिये वहाँ पर चलना चाहिये और उनकी क्रिया

कर्मादि नाच कराये। सो वे वहाँ से चल दिये और थोड़े ही समय में अपनी माता के सामने पहुँच गये। आपको देख कर आपकी माता बड़ी प्रसन्न हुई। माता ने आपसे ऐसा उपदेश देने को कहा जिससे उनका मोक्ष हो जाय। माता की आज्ञा पाकर आपने अद्वैतवाद का उपदेश दिया जिससे उनके दिल में ज्ञान पैदा हुआ और वे परलोक सिधारीं। जो उपदेश आपने अपनी माता को दिया उसका एक ग्रंथ बनाकर उसका नाम 'उपदेश साहस्त्री' रक्खा।

माता की मृत्यु हो जाने पर आपने क्रिया कर्म अपने हाथ से किया। ऐसा कर्म करते देख कर आपके सम्बन्धियों ने आपकी निन्दा की और कहा कि सन्यासियों को दाह क्रिया करने का कोई अधिकार नहीं है। इसको सुनकर शङ्कर जी ने उनको श्राप दिया कि तुम्हारे घर में चिता बना करेगी। यती लोग तुम्हारे यहां का अन्न नहीं ग्रहण करेंगे। उसके बाद शङ्कर जी माता का सर्व काम पूरा करके चले गये और इधर पद्म-पादाचार्य जी भी अपने मातुल के गाँव में पहुंचे। मातुल ने इनकी बड़ी आवभगत की। जब सब को भोजन करा चुके तब उन्होंने इनसे पूछा कि आपके पास ये सब पुस्तकें किस विषय की हैं। उन्होंने जवाब दिया कि

सूत्र भाष्य की यह टीका है । इस पर मातुल बड़ा दुःखी हुआ । क्योंकि वह बड़ा भारी कर्मकान्डी था और उसके मत का खंडन भी उसमें अच्छी तरह किया गया था । मगर ऊपर से उसने प्रसन्नता प्रगट की। पद्मपादाचार्य जी रामेश्वर जी का दर्शन करके आ रहे थे । अतएव वे सब अपनी पुस्तकों को वहीं पर छोड़ गये । जब वे चले गये तब मातुल ने उनकी सब पुस्तकों को मकान में रख कर उसमें आग लगा दी, जिससे वे सारी पुस्तकें जल कर भस्म हो गई । जब पद्मपादाचार्य जी रामेश्वर जी से लौट कर आये तब उनको मालूम हुआ कि उनकी सब पुस्तकें जल कर भस्म हो गई हैं । इससे उनको बहुत बड़ा दुःख हुआ। इसी समय उनके शिष्य भी उनके पास आ गये। वे सब अपने गुरू जी के पास करेल देश को रवाना हुये । कुछ दिन बाद वे शङ्कर जी के पास पहुंच गये ।

वहाँ पर पद्मपादाचार्य जी ने सारा किस्सा शङ्कर जी को सुनाया और कहा कि किस प्रकार मातुल ने उनकी सब पुस्तकों को भस्म कर दिया है और भोजन में न मालूम क्या मिला दिया है कि जब हम लिखने बैठते हैं तब हमारी बुद्धि नहीं काम देती । इन्होंने शंकर जी से पूछा कि हमने कौन से अपराध किये हैं कि हमारी यह

हालत हुई। शङ्कर जी ने कहा कि इसमें रञ्ज करने की कोई बात नहीं है और आपने इनको सारी पञ्चपदी जिसे आपने बनाया था लिखवा दिया जिसको पढ़कर पद्म-पादाचार्य जी बड़े हर्षित हुये और उनका कष्ट सब जाता रहा।

## करेल नरेश का आगमन

शङ्कर जी के यश को सुनकर करेल देश का राजा भी आपका दर्शन करने के लिये आया। वह आपके चरणों में गिर पड़ा और अपना नाम राजशिरोमणि बताते हुये कहा कि मुझे आपके दर्शन की बड़ी इच्छा थी जो आज भाग्यवश पूरा हुआ। इस राजा ने तीन ग्रन्थ लिखे थे मगर किसी कारण वश जल गये थे। जब शङ्कर जी को यह बातें मालूम हुईं तब आपने उसके तीनों ग्रन्थों को पढ़कर राजा को सुना दिया। राजा ने यह सुनकर बड़ा चकित हुआ और उसको अच्छी तरह मालूम हुआ कि शङ्कर जी बड़े भारी योगी हैं। फिर आपसे प्रार्थना की कि मुझे उन तीनों ग्रन्थों को लिखवा दीजिये। शङ्कर जी ने तीनों ग्रन्थों को लिखवा दिया और कहा कि जिन ब्राह्मणों को मैंने श्राप दिया है वे कर्म के अधिकारी नहीं हैं। उनके साथ तुम ऐसा ही बर्ताव करना फिर अपनी पञ्चपदी पुस्तक को

लिखवाकर कहा कि इसको तुम हमेशा पढ़ना तो तुम्हारा चित्त बहुत शुद्ध और शान्त रहेगा। राजा वहाँ से आपकी आज्ञा लेकर चला गया।

## शङ्कर जी का दिग्विजय करना

शङ्कर जी वहाँ से चलकर सुधन्वा राजा के राज्य में आये। इसने भी आपका बड़ा अच्छा आदर किया। कुछ दिन आप यहीं पर रहे और राजा को अपना शिष्य बनाया। तत्पश्चात् आप दिग्विजय करने के लिये निकल पड़े। सर्व प्रथम आप मध्यार्जुन धाम में गये। वहाँ पर कुछ समय तक रहे। एक दिन वहाँ के लोगों को एकत्रित किया और उनके सामने आपने महादेव जी से प्रार्थना की कि आप प्रगट होकर कहें कि द्वैत मत सत्य है या अद्वैत मत। इन दोनों में जो मत सत्य हो सो कहें। महादेव जी ने प्रकट होकर कहा कि अद्वैत मत ही सत्य है। जब लोगों ने साक्षात् महादेव जी के मुख से अद्वैतवाद की सराहना करते सुना तब उन लोगों ने इसी मत को स्वीकार किया। शंकर जी वहाँ पर अद्वैत मत का प्रचार करके तुलाभवानी नामक स्थान में पहुंचे। वहाँ के सब लोग शक्ति के उपासक थे। उन लोगों ने शंकर जी से भी इस मत को स्वीकार करने के लिये अनुरोध किया। आपको शिक्षायें भी देने

लगे। उन लोगों ने कहा कि हमारे मत में भोग और मोक्ष दोनों मिलते हैं मगर आपके मत में केवल मोक्ष ही है। हम लोग मद्य, माँस, मछली, मुद्रा और मैथुन पाँच प्रकार का सेवन करते हैं। जो मनुष्य मद्य, माँस और मछली का सेवन नहीं करता है वह पशु के समान है, उसे भोग में कुछ भी आनन्द नहीं आ सकता। मुद्रा के बिना तो संसार का कोई भी काम नहीं हो सकता। हमारे मत में ऐसी बात है कि जब हमें मोक्ष मिलेगी तो भोग करने के लिये भी अच्छी अच्छी चीजें मिलेंगी।

इस पर आपने उनको समझाया कि ऐसा कर्म वेद में नहीं लिखा है। मद्यपान करने वाला बड़ा पापी होता है। बेद विरुद्ध कर्म करने से उसे नरक मिलता है। तुम लोग सब वेद के विरुद्ध काम करते हो इसलिये तुम सब को नरक भोगना पड़ेगा। शक्ति की उपासना से मोक्ष कभी नहीं मिलता है और न ऐसा वेद ही कहते हैं। मोक्ष अगर मिलता है तो ज्ञान से मिलता है। अगर तुम अपना कल्याण चाहते हो, अगर तुम सचमुच मोक्ष चाहते हो तो शक्ति मत को त्याग दो और हमारे अद्वैत मत को ग्रहण करो। आपकी जादू भरी शिक्षा ने उन लोगों की आँखें खोल दी और उन लोगों ने तुरन्त शक्ति मत को छोड़ कर आपके मत को ग्रहण कर लिया।

दूसरे दिन लक्ष्मी के उपासक आपके पास आये और कहने लगे कि हमलोग लक्ष्मी जी के उपासक हैं। लक्ष्मी जी ही संसार की माता हैं? यही दुनिया की रचना करती हैं और नाश करती हैं। इसकी सेवा करने से भोग और मोक्ष दोनों मिलता है। उन लोगों ने शंकर जी से भी प्रार्थना की कि आपको लक्ष्मी-उपासक होना चाहिये। इस पर आपने उनको समझाया कि तुम्हारी लक्ष्मी जड़ होंगी या चेतन होंगी। अगर जड़ हैं तो जड़ में रचने की शक्ति नहीं होती। जड़ में भोग और मोक्ष दोनों की शक्ति नहीं है। और अगर चेतन हैं तो वे पुरुष का कल्याण कभी नहीं कर सकतीं। तुम्हारा रास्ता बिलकुल गलत है। तुम्हें अद्वैत मत का रास्ता पकड़ना चाहिये और उसी में तुम सब का कल्याण होगा। इसी से तुमको मोक्ष मिलेगा और तुम आवा-गमन से छूट जावोगे। इनके आदेश का लोगों पर अच्छा असर पड़ा और वे लोग लक्ष्मी जी को छोड़ कर अद्वैत मत को मानने लगे और शंकर जी के शिष्य हो गये।

एक दिन सरस्वती के उपासक आपके पास आये और आपसे कहने लगे कि हम लोग सरस्वती जी के उपासक हैं। यह सरस्वती नित्य हैं तथा वेद रूप है। यही ब्रह्म को भी उत्पन्न करती हैं। जब प्रलय होता है

तब यहीं हर एक को नाश करती हैं। आपको भी इन्हीं का आश्रय लेना चाहिये। इस पर शङ्कर जी ने कहा कि सरस्वती ऐसा कभी नहीं हो सकती। जब प्रलय होता है तब ब्रह्मा तक का नाश हो जाता है। सिवाय ब्रह्म के कोई भी नहीं रह सकता। तुम्हारी सरस्वती का भी नाश हो जाता है। वे नित्य कभी नहीं हो सकतीं। जो लोग देवियों के उपासक हैं तथा जिन लोगों ने बुरे कर्म को अपनाया है उनको मोक्ष कभी भी नहीं मिल सकता। जो ब्राह्मण शराब पीता है और वेद विरुद्ध के काम करता है उसे नरक अवश्य मिलता है और वहाँ पर उसे नाना प्रकार के कष्टों को भोगना पड़ता है। शङ्कर जी ने उन लोगों को समझाया कि अगर तुम सचमुच मोक्ष चाहते हो तो इस बुरे रास्ते को छोड़ कर हमारे अद्वैत मत को अपनाओ। इसीसे तुम्हारा कल्याण होगा। उनको आपने अपने सदुपदेश से शुद्ध किया। वे लोग इनके शिष्य हो गये और इन्हीं के मत को मानने लगे।

एक दिन वासुदेव के भक्त आये और वासुदेव जी की बड़ाई करने लगे तथा आपको भी वासुदेव के उपासक बनने को कहा। दूसरे दिन भागवत मतानुयायी आये और उन्होंने भी वैसाही कहा। तीसरे दिन नारद पञ्चरात्र मत के लोग आये। चौथे दिन अग्नि के उपासक

आये। पाँचवें दिन जल के उपासक आये। छठवें दिन आकाश के उपासक, सातवें दिन गणेश के उपासक, आठवें दिन सूर्य के उपासक आपके पास आये और अपने अपने इष्ट देवता की बड़ाई करने लगे तथा आपसे भी वही करने को कहा, मगर आपने हर एक को समझाया और प्रत्येक मतावलम्बियों को अपना शिष्य बनाया। हर एक ने अद्वैत मत को ग्रहण किया और इनके शिष्य हो गये।

वहाँ से शङ्कर जी चल दिये और काँचीपुर पहुंचे। वहाँ पर आपने शारदा नामक एक मठ की स्थापना की और लोगों को अद्वैत मत का आदेश दिया तथा लोगों को शिष्य बनाया। कुछ समय वहाँ पर रहकर विदर्भ देश को चले। रास्ते में उन्हें ताम्रपर्णी नदी मिली। वहाँ के रहने वालों ने आपके मत का खंडन किया। मगर आपने उनको अच्छी तरह समझाया जिससे वे लोग आपके शिष्य हो गये और सभी अद्वैतवादी हो गये।

फिर आप विदर्भ देश पहुंचे। यहाँ के राजा को भी अद्वैत मत समझाया और उसको अपना शिष्य बनाया। फिर शङ्कर जी कर्णाटक पहुँचे। उस समय वहाँ पर अधिकतर लोग कापालिक मत के और भैरव के उपासक थे। उसी स्थान पर कापालिकों का गुरु रहता था। उसका

नाम था क्रकय। ये लोग बड़े अत्याचार करते थे। जब इसने सुना कि शङ्कराचार्य नामक एक बहुत बड़े महात्मा अपने शिष्यों सहित आये हैं तो वह भी अपने शिष्यों सहित आपके पास उपस्थित हुआ। इसके सर में चिता की भस्म लगी थी। गले में मनुष्यों की खोपड़ियों की बड़ी माला पड़ी थी। इसके शिष्य भी ऐसे ही रूप बनाये थे। वह आकर कहने लगा कि यह धूल जो आपके सर में लगी है हमें अति प्यारी है मगर आपने हमारे ऐसी माला क्यों नहीं पहन रक्खी है? वेष के बिना मोक्ष कभी भी नहीं मिल सकता। उन्होंने कहा कि अगर भैरव को मदिरा पान कराया जायगा और मनुष्य का बलि दिया जायगा तभी कल्याण हो सकता है। भैरव ही संसार को पैदा करता है और नाश करता है। सुधन्वा राजा शंकर जी के साथ था। उसको कपालिकों के ऊपर क्रोध आया। उसने अपने नौकरों से कहा कि सब कपालिकों को मार डालो। नौकरों ने उसी समय सबको मार डाला। जो लोग वहाँ से भाग गये थे दूसरे दिन हाथ जोड़ कर शंकर जी के पास आये और आपसे क्षमा की याचना करने लगे। शंकर जी ने उनको सुन्दर उपदेश दिया जिसको सुनकर उनके ज्ञान चक्षु खुल गये

और वे लोग आपके शिष्य बन गये और अद्वैत मत को मानने लगे। हर एक का विश्वास भैरव के ऊपर से उठ गया। उन लोगों ने सोचा कि भैरव होते तो वे अवश्य आकर हमारी मदद करते। उसी प्रकार शीतला-देवी और काली देवी के उपासकों ने भी अपने देव देवियों के ऊपर से विश्वास छोड़ दिया और शंकरजी के शिष्य होगये।

एक दिन शंकर जी ने एक बड़ी सभा की और अपने अद्वैत मत का उपदेश वहाँ के लोगों को देने लगे। थोड़ी देर बाद एक जैनमत का अनुयायी वहाँ पर आया और शंकर जी से बोला कि जब यह शरीर मरता है तब इसकी मुक्ति हो जाती है। दूसरे जन्म में इसको कोई शरीर नहीं धारण करना पड़ता। अतएव ज्ञान की आवश्यकता मनुष्यों को क्यों पड़ती है? इस पर आपने उत्तर दिया कि शरीर तीन प्रकार का होता है। १—स्थूल २—सूक्ष्म और ३ कारण। सूक्ष्म और कारण शरीर का नाश बिना आत्मा के ज्ञान के नहीं हो सकता। अतएव प्रत्येक मनुष्य को ज्ञानी होना अत्यन्त आवश्यक है। स्थूल शरीर का मोक्ष तो कभी हो ही नहीं सकता। कुछ देर बाद एक सन्यासी बौद्धमत का आया और उसने भी आप से प्रश्न किया कि जब यह आत्मा शरीर

को छोड़ती है तब उसे मुक्ति मिल जाती है। अतएव इसे साधन करने की क्या ज़रूरत है? इस पर आपने कहा कि अगर इस बात का पूरा विश्वास कर लिया जाय कि दूसरा जन्म शरीर का नहीं होता, उसका मोक्ष हो जाता है तब मनुष्य अच्छे कर्म करने का प्रयत्न क्यों करता है। अगर वह अच्छे कर्म करेगा तब भी मोक्ष होना चाहिये और बुरे कर्म करे तब भी तुम्हारे मत के अनुसार उसे मोक्ष मिलना चाहिये। अतएव अगर यह ठीक हो तो मनुष्य अच्छे कर्म को ही क्यों करे और बुरे कर्मों का फल उसे क्यों भोगना पड़े। इसलिये जो कुछ तुम कहते हो वह सब ग़लत है। जब तक आत्मा में ज्ञान न आयेगा और जब तक वह अच्छे अच्छे वेदानुसार कर्म न करेगा उसे मोक्ष कभी नहीं मिल सकता। यह बात उसके हृदय में समागई और शंकर जी के मत को उसने तथा उस जैन पण्डित ने स्वीकार कर लिये और आपके शिष्य हो गये।

शंकर जी फिर कर्नाटक में पहुंचे। वहाँ पर आपने वहाँ के ब्राह्मणों को इकट्ठा किया और उनसे उनका मत पूछा। उन्होंने उत्तर दिया कि हम लोग मल्लारी नामक देवी की पूजा करते हैं जिसका वाहन कुत्ता है। हम उसके आगे नाचते हैं तथा उत्सव मनाते हैं। हम लोग

कुत्तें को भी पूजते हैं और उसको भी हम लोग उसे इष्टदेवता मानते हैं। इस पर आपने उनको समझाया कि किसी पुस्तक में श्वान नामक देवता का नाम नहीं आया है। अतएव तुम वेद विरुद्ध काम करते हो। इसलिये तुम ब्राह्मण के पद से गिरे जा रहे हो। तुम लोगों को चाहिये कि जो तुम्हारे कर्म वेद में लिखे हैं उसे करें। जो सच्चिदानन्द स्वरूप है उस ब्रह्म की उपासना तुम लोगों को करना चाहिये। वे लोग भी उसी दिन से श्वान का पूजन बन्द करके आपके मत को मानने लगे और आपके शिष्य हो गये।

वहाँ से शंकर जी पश्चिम की तरफ मरुध नामक नगर में गये। वहाँ पर विष्वक्सेन नामक एक आदमी रहता था और उसके पास एक बहुत बड़ा मन्दिर भी था। वहां के लोग इसी को अपना इष्टदेवता मानते थे और इसी की पूजा किया करते थे। उनका विश्वास था कि अगर विष्वक्सेन की अच्छी तरह सेवा करेंगे और अगर वह हमारी सेवा पर प्रसन्न हो जायगा तब हमको सब पदार्थ मिल जाँयगे। जब शङ्कर जी को ये सब बातें मालूम हुईं तब आपने वहाँ के लोगों को एकत्र किया और उनको समझाया कि पेड़ की डालियों को सींचने से क्या लाभ होगा। अगर तुम लोग उस पेड़ को र्क्ष्/ ।।

चाहते हो तो जड़ को सींचो। उसी प्रकार जितने देवता हैं सब सच्चिदानन्द स्वरूप ब्रह्म से निकले हैं। वही इन सबको उत्पन्न करने वाला है और नाश करने वाला है। उसी की सेवा करने से सब प्रकार के फल मिलते हैं। अतएव तुम लोग भी उसी की सेवा करो। शङ्कर जी के इस उपदेश को सुनकर वे आपके शिष्य हो गये और आपके मत को मानने लगे।

वहीं पर कुछ मनुष्य कामदेव के उपासक थे, उन्होंने आकर शङ्कर जी से कहा कि हम लोग कामदेव की सेवा करते हैं क्योंकि सारे संसार को कामदेव ही उत्पन्न करता है तथा सारे प्राणियों के हृदय में वही निवास करता है। यह इतना बली है कि इसने सारे देवताओं को जीत लिया है। यहां तक कि इसने आदि देवता विष्णु को भी जीत लिया है। उनको भी शंकर जी ने अच्छी शिक्षायें दी जिससे वे भी इस मार्ग से सत्य मार्ग में आ गये और आपके शिष्य हो गये।

यहाँ से चलकर शंकर जी मगध देश को पहुंचे। वहाँ के लोगों ने जब सुना कि एक बहुत बड़े विद्वान् सन्यासी आये हैं तो उनका दर्शन करने के लिये आये। उन लोगों ने अपने को कुवेर का उपासक बताया और कहा कि जितने प्रकार के खज़ाने हैं सब के मालिक कुबेर

ही हैं। विना धन के किसी का भी काम नहीं चल सकता। जो लोग ग़रीब हैं वे बड़े दुःखी हैं और धनी लोग आनन्द करते हैं। धन की प्राप्ति के लिये कुवेर की उपासना करना अत्यन्त आवश्यक है। अतएव हमारा ईश्वर तो कुवेर ही है। इस पर शंकर जी ने उनको अनेक उदाहरण देते हुये समझाया कि जो लोग कुवेर को जानते ही नहीं हैं या कुवेर की सेवा नहीं करते हैं उनके यहाँ भी लक्ष्मी जी विराजमान रहती हैं और वे राजसुख किया करते हैं। इसका क्या कारण है। आपने वतलाया कि सर्व शक्तिमान ब्रह्म है। वही इन सब देवताओं को भी पैदा करता है। उसी की उपासना से सब कुछ प्राप्त हो सकता है। शङ्कर जी के उपदेश ने उनको भी अद्वैत मत का मानने के लिये वाध्य किया और वे भी आपके शिष्य हो गये।

वहीं पर एक दिन इन्द्र के उपासक शङ्कर जी के पास आये और उनसे कहा कि हम लोग इन्द्र की पूजा करते हैं। इन्द्र देवताओं का राजा है तथा अमर है। हमारी जिन्दगी उसी के आधीन है। जब वह क्रोध करता है तभी अकाल पड़ता है। क्योंकि पानी उसी की आज्ञा से वरसा करता है। अमृत का घड़ा उसी के पास रहता है। विना उसकी सेवा किये तथा विना उसे प्रसन्न

किये यह अमृत किसी को भी नहीं मिल सकता। अत-एव इन्हीं कारणों से हम इन्द्र को अपना इष्टदेव मानते हैं। इस पर शङ्कर जी ने कहा कि इन्द्र देवताओं का राजा अवश्य है और वह स्वर्ग में अवश्य रहता है, मगर वह जन्म और मरण से मुक्त नहीं है। जिसने स्वयम् जाकर ब्रह्मा से आत्मविद्या सीखी उसकी उपासना से मुक्ति कभी नहीं मिल सकती। प्रत्येक मनुष्य को ब्रह्म की उपासना करनी चाहिये। क्योंकि वह ब्रह्म न कभी मरता है और न कभी जन्म लेता है। उसी की सेवा करने से मनुष्य को मोक्ष मिलता है। इस शिक्षा को सुनकर उन लोगों ने भी इन्द्र को त्याग दिया और ब्रह्म की उपासना करने लगे।

कुछ दिन वहाँ पर रहकर शङ्कर जी यमप्रस्थपुर में आये। यहाँ पर आपको मालूम हुआ कि अधिकतर लोग यमराज के उपासक हैं उनका कहना था कि वे ही संसार को उत्पन्न करते हैं तथा नाश भी करते हैं। मरते समय प्रत्येक मनुष्य को यमराज की यातनायें सहनी पड़ती हैं। जब मनुष्य मर जाता है तब उसकी आत्मा को भी यमराज द्वारा अनेक कष्ट भोगने पड़ते हैं। जो लोग यमराज को अपना इष्टदेव मानते हैं उन्हें कभी भी ऐसी यातनायें

नहीं सहनी पड़तीं। वे सीधे स्वर्ग को जाते हैं और उनका मोक्ष हो जाता है। इस पर शङ्कर जी ने उन लोगों को समझाया कि यमराज भी उस ब्रह्म से सदैव डरता रहता है और दिनरात इधर से उधर भ्रमता फिरता है। तथा यम की उपासना से कल्याण हो ही नहीं सकता क्योंकि यह लोकपालों में जीव करके कहा गया है। जो अन्तर्यामी होकर प्रत्येक के हृदय में प्रेरणा किया करता है तथा प्रत्येक के कर्मों का जो साक्षी है वही वेद में ईश्वर के नाम से पुकारा गया है और उसी को हम ईश्वर कहते हैं। अतएव अगर हम लोगों को मोक्ष की प्राप्ति करनी है तथा तुम लोग अपना कल्याण चाहते हो तो यमराज की उपासना त्याग दो और हमारे मार्ग में चलकर निर्गुण ब्रह्म की सेवा करो। उसी से तुम्हें मोक्ष मिलेगा। लोगों ने इनकी शिक्षाओं को ग्रहण किया और सब के सब इनके शिष्य होगये।

वहाँ से शंकर प्रयागराज आये। उस समय वहाँ के ब्राह्मण वरुण देवता को अपना इष्ट मानते थे और उसी की उपासना किया करते थे। आपने वहाँ के लोगों को एकत्र किया और जब आपको मालूम हुआ कि ये सब वरुण के उपासक हैं तब आपने कहा कि वह ईश्वर नहीं बल्कि जल के अन्दर रहने वाला जल का

राजा है। जब लोगों को यह बात मालूम हुई तब उन लोगों ने भी वरुण को त्याग दिया और अद्वैत मत मान कर ब्रह्म की सेवा करने लगे।

वहीं पर एक दिन प्रधानवादी सांख्यों ने आकर आपसे कहा कि हम लोग प्रधान ही को अपना इष्टदेव मानते हैं क्योंकि यही संसार का कर्ता है। इसी को हम प्रकृति कहते हैं। इस पर शङ्कर जी ने कहा कि प्रधान जड़ है और जड़ के सेवन से मुक्ति कभी नहीं मिल सकती। जो लोग जड़ की सेवा किया करते हैं वे लोग सदैव अज्ञानी बने रहते हैं और जो लोग चेतन की सेवा किया करते हैं वे ही सुख देने वाले मोक्ष को प्राप्त करते हैं। ज्ञान ही के द्वारा मोक्ष की प्राप्ति होती है। और ज्ञान ब्रह्म की उपासना से हो सकता है। इसलिए अगर तुम लोग अद्वैतवाद को अपनाओ तो तुम्हारा सदैव कल्याण होगा। आपकी शिक्षाओं का असर लोगों पर ऐसा पड़ा कि वे भी अद्वैतमत को मानने लगे और आप के शिष्य हो गये।

एक दिन योगाभ्यास करने वाले शंकर जी के पास आये और आपसे कहने लगे कि हम लोग योगाभ्यास ही को प्रधान मानते हैं क्योंकि इससे चित्त को शान्ति मिलती है और इसी के द्वारा मोक्ष भी मिलता है। इस

पर शङ्कर जी ने कहा कि जिस प्रकार प्रकाश के बिना अन्धकार नहीं दूर हो सकता उसी प्रकार आत्मज्ञान के बिना मोक्ष नहीं मिल सकता। कोई हजारों वर्ष योगाभ्यास करता रहे मगर उसको केवल योगाभ्यास से आत्मज्ञान कभी भी नहीं हो सकता। वेद में कहे गये वाक्यों को सुनने से तथा उसको मनन करने से ही आत्मज्ञान होगा और मुक्ति मिलेगी। अतएव तुम लोग वेद-विरुद्ध कार्य को छोड़ कर उसमें बतलाये गये अद्वैत-मत को अपनाओ तथा निर्गुण ब्रह्म की सेवा करो। उसी से तुम्हारा कल्याण होगा। इन लोगों ने भी इस मत को अपनाया और सब के सब आपके शिष्य हो गये।

वहाँ से शङ्कर जी काशी को चले गये और कुछ समय तक वहीं पर रहे। एक चन्द्रमा के उपासक वहाँ पर आये और आपसे कहने लगे कि हमलोग चन्द्रमा के उपासक हैं तथा सम्पूर्ण चन्द्रमा की पूजा करते हैं। चन्द्रमा के पास अमृत रहता है। उसी से हमारा मोक्ष होता है। जो लोग चन्द्र लोक जाते हैं वे मोक्ष को पाते हैं। शङ्कर जी ने इन लोगों को समझाया कि जिस प्रकार तुम्हारी पृथ्वी है उसी प्रकार चन्द्र लोक है। जब महा प्रलय होगा तब न पृथ्वी ही रहेगा और न चन्द्रमा ही रहेगा। ये सब नष्ट हो जायेंगे। अतएव नाशवान चीज

की उपासना करने से मोक्ष कभी भी नहीं हो सकता है। अगर तुम लोग मोक्ष चाहते हो तो अद्वैतमत को अपनाओ और निर्गुण ब्रह्म की उपासना करो जो न कभी मरता है और न कभी जन्म लेता है। इस बात को उन लोगों ने भी स्वीकार कर लिया और वे लोग भी आपके शिष्य हो गये।

एक दिन पितृलोक के उपासकों ने आकर शङ्कर जी से कहा कि हम लोग पितृलोक ही को मोक्ष का घर मानते हैं। यह लोगों को विश्वास है कि पितृलोक जाने से मनुष्य अनन्तकाल तक नाना प्रकार के सुखों का भोग करता है। इस पर शङ्कर जी ने कहा कि जो लोग वहाँ पर जाते हैं वे पितर कहलाते हैं और उनको भी अपने कर्मों को भोग कर फिर जन्म लेना पड़ता है। उस परब्रह्म परमेश्वर ने ऐसा चक्र चलाया है कि पितृलोक से इस दुनिया में आना और इस दुनिया से पितृलोक में जाना लगा रहता है। अगर कोई आता है तो दूसरा यहाँ से जाता है। अर्थात् इस समय तुम लड़कों के पिता हो और मरने के बाद उस लोक में गये। फिर जब तुम यहाँ पर आओगे तो यहाँ के लोग तुम्हारे पितर हो जायेंगे। इस तरह कभी तुम उनके पितृ बनोगे और कभी वे लोग तुम्हारे पितर बनेंगे। जब ऐसा होता है तब मोक्ष कहाँ

मिला। यह कार्य तुम्हारा वेद-विरुद्ध है। तुम्हें वही कार्य करना चाहिये जो वेदानुसार हो। अगर तुम सच्चे दिल से मोक्ष चाहते हो, अगर तुम इस आवागवन से मुक्त होना चाहते हो तो हमारे अद्वैतमत को ग्रहण करो और परमब्रह्म परमेश्वर की उपासना करो। उसी से तुम्हारा कल्याण होगा। आपकी यह शिक्षा उन लोगों के हृदय में असर कर गई और वे लोग आपके शिष्य हो गये। उन लोगों ने पितृलोक की उपासना छोड़ दी और निर्गुण ब्रह्म की उपासना करने लगे।

एक दिन शेषभगवान के उपासक आपके पास आकर कहने लगे कि हम लोग शेषनाग जी की उपासना करते हैं। उनके हजार फण हैं। तथा वे इतने बलशाली हैं कि यह पृथ्वी उन्हीं के मस्तक पर रक्खी रहती है। और उनको इसका बोझ तिल के समान मालूम होता है। जब वे क्रोधित होते हैं तब अगर थोड़ा सा भी अपने सर को हिला देते हैं तो यहाँ पर बड़े बड़े तूफान आ जाते हैं। भूचाल आ जाता है तथा न मालूम कितने प्राणी मर जाते हैं। इस पर शङ्कर जी ने कहा कि यह बात ठीक है। मगर क्या कभी यह भी तुम लोगों ने सोचा है कि शेषनाग किसके आधार पर हैं? पृथ्वी तो शेषनाग के आधार पर है। अर्थात् शेषनाग इस पृथ्वी से कहीं बड़े

और वजनी हैं। अतएव इतने बड़े शेपनाग भी तो किसी के सहारे होंगे। अर्थात् ईश्वर के सत्ता पर होंगे। इसलिये अगर तुम लोग शेपनाग को छोड़ कर परमब्रह्म परमेश्वर की उपासना करो तो उससे तुम्हारा अधिक कल्याण होगा। और साथ ही साथ मोक्ष भी मिलेगा। उन लोगों ने भी ब्रह्म को परमेश्वर माना और अद्वैतमत को ग्रहण किया।

एक दिन गरुड़ के उपासकों ने आकर शङ्कर जी से कहा कि हम लोग गरुड़ भगवान के उपासक हैं। जिस प्रकार बिना दर्बारी के आज्ञा के राजा के पास जाना मुश्किल होता है, जब तक वह चाहे फाटक पर रोके रहे, भीतर न जाने दे। उसी प्रकार गरुड़ भगवान् परब्रह्म परमेश्वर की सवारी हैं। बिना उनके हुक्म के भगवान् तक पहुंचना मुश्किल है। गरुड़ ही एक ऐसा साधन है जो भगवान् तक पहुंचाता है और यही सब से सरल उपाय है। इसीलिये हमलोग गरुड़ की उपासना करते हैं। इस पर शङ्कर जी ने उत्तर दिया कि तुम्हारे गरुड़ जीवधारी हैं। जीवधारी पक्षी की उपासना करना मूर्खता है। प्रत्येक को अपने उत्तम से प्रार्थना करनी चाहिये न की निकृष्ट से। निकृष्ट की उपासना करने से फल अच्छा नहीं होता बल्कि बुरा ही होता है।

अतएव तुम लोग पक्षी की उपासना छोड़ कर सीधे सर्व व्यापी भगवान् की उपासना करो। अगर तुम लोग सच्चे दिल से उनकी सेवा करोगे तो एक गरुड़ क्या सैकड़ों गरुड़ तुम्हारे सामने स्वयम् हाथ जोड़े खड़े रहेंगे। यह बात उनकी समझ में आ गई और वे लोग भी आपके शिष्य हो गये। उन लोगों ने गरुड़ की उपासना छोड़ दी और निराकार परम् ब्रह्म परमेश्वर की उपासना करना प्रारम्भ कर दिया।

उसके बाद आपने तुलसी के उपासकों को इकट्ठा किया और उनसे पूछा कि तुम लोग तुलसी की उपासना क्यों करते हो? इस पर उन लोगों ने उत्तर दिया कि हमारे पुराणों में तुलसी का महात्म्य बहुत अच्छा लिखा है। शङ्करजी ने उन लोगों को कहा और समझाया कि तुलसी एक जड़ वृक्ष है। इसका सेवन करने से तथा इसके पास रहने से शरीर को लाभ बहुत होता है। शरीर में बल बढ़ता है और शरीर आरोग्य रहता है। मगर जड़ की उपासना करने से मनुष्य जड़ योनि में जाता है। अगर तुम लोग जड़ तुसली की उपासना करोगे तो तुम लोग भी तुलसी योनि में जावोगे और तुलसी के वृक्ष होगे। ऐसी बातें जब आपने उन लोगों को समझाई तब इनके भी ज्ञान पट खुल गये और उन लोगों ने भी

तुलसी की उपासना छोड़ दी और निराकार परमेश्वर की उपासना करने लगे। उन लोगों ने अद्वैतमत को स्वीकार कर लिया और आपके शिष्य हो गये।

एक दिन बाबा गोरखनाथ के मत को मानने वाले आपके पास आये और कहने लगे कि हम लोग गोरखनाथ को ईश्वर मानते हैं और उनकी उपासना करते हैं। जो लोग योगी बनना चाहते हैं उन्हें चाहिये कि अपने अपने कानों को फड़वा दें और उसमें मुद्रा पहिन लें। यही योगियों की पहिचान है। हर एक योगी को भैरव की सेवा करनी चाहिये तथा उनको मांस-मदिरा का भोग लगाना चाहिये। इससे वे खुश हो जाँयगे और हर प्रकार की सिद्धियाँ मिल जांयगी जिसमे मनुष्य का मोक्ष हो जायगा और वह स्वर्ग में जाकर सुख भोग करेगा। इस पर शंकर जी ने उनको समझाया कि गोरखनाथ एक बहुत बड़े तथा सिद्ध योगी हो गये हैं। उन्होंने कई पुस्तकें भी रची हैं। उनकी किसी पुस्तक में भी मांस और मदिरा का सेवन करना नहीं लिखा है। बल्कि उन्होंने लिखा है कि ऐसा करने से मनुष्य को महापाप होता है। उनकी पुस्तकों में काली तथा भैरव की उपासना का कहीं भी उल्लेख नहीं है। वे लिखते हैं कि प्रत्येक मनुष्य को शुद्ध मन से परब्रह्म

परमेश्वर पर ध्यान लगाना चाहिये। उसी की सेवा करने से मनुष्य जाति का कल्याण होगा। अब रही कान फाड़ने की बात। हमको तो ऐसा मालूम होता है कि उन्होंने यह रस्म नहीं चलाया। आगे उनके किसी शिष्य ने ऐसा किया है। अगर मान भी लिया जाय कि गोरखनाथ ने कान फड़वाया भी है तो ऐसा करने से मनुष्य अंग हीन हो जाता है। वह गृहस्थ बनने योग्य नहीं रह जाता तथा और बहुत से कर्मों का अधिकारी वह नहीं रह जाता। इसीलिये उन्होंने कान फड़वाया है। अगर तुम लोग उनकी तरह शुद्ध हृदय से नाना प्रकार के भ्रष्टाचारों को छोड़ कर परमब्रह्म परमेश्वर की उपासना करो तो तुम लोगों का अवश्य कल्याण होगा। आपके उपदेश को सुनकर उन लोगों ने आपकी शिष्यता स्वीकार करली।

एक दिन अघोरी लोग आपके पास आकर कहने लगे कि हम लोग अघोरी हैं। हम लोग संसार के प्रत्येक पदार्थ को शुद्ध मानते हैं। उनको भक्षण करते हैं। हम लोगों में जाति पाँति का भेद नहीं है। जो मनुष्य भैरव को खुश करके उन्हीं में मरने के पश्चात् लीन हो जाता है उसे मोक्ष मिल जाता है। शंकर जी ने इनको भी समझाया और ये लोग भी आपके शिष्य हो गये।

एक दिन गन्धर्वों के उपासक आपके पास आये और अपने को गन्धर्वों की उपासना करने वाले बतलाये। इनको भी शंकर जी ने समझाया कि गन्धर्वों का काम गाना गा कर देवताओं को प्रसन्न करना है। ये लोग देवताओं के आराधक हैं। अगर तुम भी ऐसा करना चाहते हो तो उनकी सेवा करो। उन लोगों ने उनकी सेवा करना छोड़ दिया और आपके शिष्य हो गये। तथा अद्वैत मत को मानने लगे।

एक दिन भूत प्रेतों के उपासक आपके पास आये और कहा कि हम लोग भूत प्रेतों की सेवा करते हैं। शंकर जी ने उनको समझाया कि जो लोग भूत प्रेतों की सेवा करते हैं वे मर कर भूतयोनि में जाते हैं और हज़ार वर्ष तक अनेक कष्टों का सामना करते हैं। उनकी गति कभी नहीं होती। लोगों ने प्रेतों की उपासना छोड़ दी और आपके शिष्य होगये।

अब शंकर जी काशी से फिर चल पड़े। भारतवर्ष के पश्चिम की तरफ चले। कुछ समय बाद समुद्र के किनारे पहुंचे। वहां पर आपने लोगों को समुद्र की उपासना करते पाया। लोगों ने आपसे कहा कि हमको समुद्र कीमती रत्न देता है क्योंकि इसमें रत्नों का ख़ज़ाना है। शंकर जी ने उनको बहुत समझाया कि समुद्र ज्ञानहीन

वस्तु है। ऐसे जड़ की सेवा करने से कोई भी लाभ नहीं होता। उन लोगों ने भी समुद्र की उपासना छोड़ दी और आपके शिष्य होगये।

शंकर जी फिर गोकर्णनाथ महादेव के पास पहुंचे। वहाँ पर नीलकंठ नाम का एक बहुत बड़ा शिवभक्त रहता था। उनके अनेक शिष्य थे तथा उसने बहुत सी पुस्तकें लिखी थीं, जिसमें शिवजी को ईश्वर साबित किया था। जब उसने शंकर जी का नाम तथा आगमन सुना तो वह अपने शिष्यों के सहित आपके पास आया और अपना परिचय दिया। उसने आपको अनेक प्रकार से समझाया कि भगवान का नाम शिव है और शिवजी ही भगवान हैं। शंकर जी ने अपने तर्क से इस बात को काट दिया और साबित कर दिया कि परब्रह्म परमेश्वर की उपासना स्वयम् शिवजी भी किया करते हैं। वे भी इनके आधीन हैं। आपकी युक्तियों को सुनकर नीलकंठ दंग रह गया और आपका शिष्य होगया।

शंकर जी वहां से चलकर द्वारकापुरी में गये। वहां परमक्रांकित पंचरत्न मत को मानने वाले बहुत थे। आपने उनको भी अपना उपदेश किया और उनको भी अपना शिष्य बनाया। वहाँ से आप उज्जैन पुरी में गये। महाभास्कर नामक महापंडित के साथ शास्त्रार्थ

किया और उनको भी हराकर अपना शिष्य बना डाला। फिर आप बाह्लिक देश को गये और अर्हतमत के लोगों को उपदेश देकर अपना शिष्य बनाया। इस प्रकार आपने सब जगहों पर विजय प्राप्त किया।

## शंकराचार्य जी की बीमारी

एक दिन शंकराचार्य जी को मारने के अभिनव ने बहुत बड़ा अनुष्ठान किया। जिससे आपको भगन्दर का रोज हो गया। आपने अनेको वैद्यों को बुलाया और सब की दवा की मगर किसी से अच्छे न हुये। एक दिन अश्विनी कुमार आपके पास आये और आपसे कहा कि यह रोग अनुष्ठान द्वारा आया है अतएव दवा से अच्छा नहीं हो सकता। इसपर पद्माचार्य जी ने भी एक अनुष्ठान किया जिससे शंकर जी इस रोग से मुक्त हो गये।

## मृत्यु

एक दिन आप गंगा जी के किनारे ध्यान लगाये बैठे थे कि गौडपादाचार्यजी आ उपस्थित हुये। आपने उनका उचित सत्कार किया। वहाँ से आप वृन्दावन को गये और कुछ समय तक वहीं पर रहे। फिर आप अपने शरीर को छोड़ परमधाम को चले गए।

---

## आपकी कुछ शिक्षायें

आप एक बहुत बड़े महात्मा तथा योगी हो गये हैं। आज भी भारतवर्ष में आपके अनुयायी बहुतायत से पाये जाते हैं। आप जहाँ कहीं भी गए लोगों को अनेक अच्छी अच्छी शिक्षायें दीं। आप श्रोतागणों के सन्मुख कुछ सुन्दर प्रश्न रखते थे और उनका उत्तर स्वयम् ही देते थे जिससे लोगों की समझ में अच्छी तरह आ जाता था और वे लोग इनका पालन भी सुचारु रूप से करते थे। यही करण है कि आप भगवान के एक अवतार माने जाते हैं। नीचे प्रश्न और उनके उत्तर दिये जाते हैं। आशा है कि पाठकों को भली भाँति समझ में आ जायगा।

१—दरिद्र कौन है?—जो भारी तृष्णा में लीन रहता है।

२—धनवान कौन है?—जिसके हृदय में सन्तोष हो अपना आसन जमा लिया हो अर्थात् जो सन्तोषी है।

३—जीते जी कौन मरा है?—जो पुरुषार्थ खो बैठा हो।

४—अमृत क्या चीज़ है?—सुख देने वाली निराशा ही अमृत है।

५—वास्तव में फाँसी क्या है?—मैं और मेरा मन ही फाँसी है।

६—बड़ा भारी अंधा कौन है ?—जो सर्वदा काम में व्याकुल रहता है ।

७—मृत्यु क्या है ?—अपनी अपकीर्ति ।

८—गुरु कौन है ? जो केवल भलाई की ही शिक्षा देता हो ।

९—बड़ा भारी रोग क्या है ?—बार बार जन्म लेना ।

१०—पूर्वोक्त रोगकी दवा क्या है ?—परमात्मा का भजन करना ।

११—सर्वोत्तम भूषण क्या है ?—उत्तम चरित्र ।

१२—सब से उत्तम तीर्थ क्या है ? अपना मन जो विशेष रूप से शुद्ध किया गया हो ।

१३—सदा श्रवण करने योग्य क्या है ?—वेद और गुरु का वचन ।

१४—वास्तविक ज्वर क्या है ?—चिन्ता ।

१५—मूर्ख कौन है ?—जो विचारहीन हो ।

१६—करने योग्य अच्छी क्रिया क्या है—शिव और विष्णु की भक्ति ?

१७—वीरों में सब से बड़ा वीर कौन है ?—जो काम बाणों से वेधा नहीं जा सकता ।

१८—विष से भारी विष कौन है ?—सारे विषय भोग ।

१९—सदा दुखी कौन है ?—जो संसार के भोगों में लीन है ।

२०—कौन पुरुष धन्य है ?—जो परोपकारी है।

२१—पूजनीय कौन है ?—कल्याण रूप परमात्मा में लीन महात्मा।

२२—लोगों को क्या करना चाहिये तथा क्या न करना चाहिये ?—लोगों को संसार में स्नेह और पाप न करना चाहिये और आनन्द पूर्वक सद्ग्रंथों का पठन करना, धर्म का पालन तथा हरि भजन करना चाहिये।

२३—प्राणियों के लिये बेड़ी क्या ?—स्त्री।

२४—पशु कौन है ?—जो विद्या-रहित हो।

२५—किन-किन के साथ न रहना चाहिये ?—मूर्ख, नीच, दुष्ट तथा पापियों के साथ।

२६—छोटेपन की जड़ क्या है ?—याचना।

२७—बड़प्पन की जड़ क्या है ?—कुछ भी न माँगना।

२८—किसका जन्म सराहनीय है ?—जिसका फिर से जन्म न हो।

२९—गूँगा कौन है ?—जो समय पर उचित वचन नहीं कह सकता हो।

३०—बहिरा कौन है ?—जो यथार्थ और हितकर वचन नहीं सुनता।

३१—सर्वोत्तम क्या चीज है ?—उत्तम आचरण।

३२—कौन सा सुख तज देना चाहिये ?—स्त्री सुख।

३३—सबसे बड़े शत्रु कौन, है ?—क्रोध, झूठ, लोभ और तृष्णा।

३४—सच्चा कर्म क्या है ?—सदा दूसरे की भलाई करना।

३५—कौन सा कर्म करके पछताना नहीं पड़ता ? भगवान् शिव और विष्णु का पूजन करके नहीं पछताना पड़ता।

३६—किसके नाश में मोक्ष है ?—मन के नाश में।

३७—किस वस्तु में कभी भय नहीं है ?—मोक्ष में।

३८—पूजनीय कौन-कौन हैं ?—देवता, गुरू तथा वयोवृद्ध।

३९—मरते समय किसकी चिन्ता करनी चाहिये ?—भगवान् कृष्ण के कमल चरणों को मनसा वाचा-कर्मणा से ध्यान करना चाहिये।

४०—डाकू कौन है ?—बुरी वासनायें।

४१—सभा में कौन शोभायमान् होता है ?—अच्छा विद्वान्।

४२—माता के समान सुख देने वाली कौन है ?—उत्तम विद्या।

४३—दान देने से क्या बढ़ती है ?—अच्छी विद्या।

४४—हमेशा किससे डरते रहना चाहिये ?—लोक निन्द से और संसार रूपी वन से ।

४५—अत्यन्त प्यारा भाई कौन है ?—जो विपत्ति के समय सहायता करे चाहे वह जिस जाति का हो ।

४६—पिता कौन है ?—जो सब प्रकार से पालन पोषण करे ।

४७—किसके जानने पर संसार जाना जाता है ?—सर्वरूप परमब्रह्म परमेश्वर को ।

४८—संसार में दुर्लभ क्या वस्तु है ?—सद्गुरू मिलना, सत्संग करना । ब्रह्म विचार होना, सर्वस्व का त्याग करना और परमात्मा का ज्ञान होना ।

४९—सब के लिये क्या जीतना कठिन है ?—कामदेव ।

५०—पशुओं से बढ़ कर पशु कौन है ?—शास्त्र का अध्ययन करके जो अपने धर्म का पालन नहीं करता ।

५१—वह कौन सा विष है जो अमृत सा जान पड़ता है ?—नारी ।

५२—शत्रु कौन है जो मित्र सा जान पड़ता है ?—पुत्र तथा कुटुम्बी ।

६३—बिजली की तरह क्षणिक क्या है ?—धन, यौवन और आयु ।

५४—सबसे उत्तम दान क्या है ?—विद्या ।

५५—वास्तविक कर्म क्या है ?—जो भगवान् श्रीकृष्ण को प्रिय हो ।

५६—हमेशा किसका अविश्वास करना चाहिये ?—संसार का ।

५७—वास्तव में बँधा कौन है ?—विषयों में आसक्त ।

५८—विमुक्ति क्या है ?—विषयों से वैराग्य ।

५९—घोर नरक क्या है ?—अपना शरीर ।

६०—स्वर्ग का पद क्या है ?—तृष्णा का नाश होना ।

६१—संसार को कौन हर सकता है ?—आत्मज्ञान ।

६२—मोक्ष का कारण क्या है ?—आत्मज्ञान ।

६३—नरक का प्रधान द्वार क्या है ?—नारी ।

६४—स्वर्ग को देने वाली क्या है ?—जीवमात्र की भलाई ।

६५—शत्रु कौन है ?—अपनी इन्द्रियाँ ( अगर जीती हों तो मित्र हैं ) ।

६६—शिष्य कौन है ?—जो गुरु का परम् भक्त हो ।

६७—वास्तविक विद्या कौन सी है ?—जो परमात्मा को प्राप्त करा देने वाली हो ।

६८—सर्वश्रेष्ठ लाभ क्या है ?—परमात्मा की प्राप्ति ।